तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समाज :-

- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में उच्च वर्गीय समाज
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में मध्यमवर्गीय समाज

- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में निम्नवर्गीय समाज
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में मुस्लिम समाज
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों के समाज में हिन्दू-मुस्लिम एक्य

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समाज :-

किसी भी उपन्यास के लिए उसमें अभिव्यक्त समाज अत्यंत महत्व रखता है । साहित्य एवं समाज का घनिष्ठ संबंध है । लेखक समाज में घटित होने वाली घटनाओं से प्रभावित होता है । वह जिस समाज में जीवन-यापन करता है । उस समाज के आचार-विचार, रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान, मान्यताओं एवं परंपराओं आदि का प्रभाव उसके उपन्यासों में प्रतिबिंबित होता है । इसके अतिरिक्त समाज की विविध समस्याओं आदि को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत कर उसके समाधान के लिए भी प्रेरित करता है । एक संवेदनशील लेखक तत्कालीन समाज से प्रभावित हो उस समाज का वास्तविक रूप अपने उपन्यासों में चित्रित करता है । राही जी एक संवेदनशील लेखक के रूप में जाने जाते हैं । अतः उनकी यह संवेदनशीलता उनके साहित्य में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है ।

डॉ० राही मासूम रज़ा एक संवेदनशील, स्पष्टवादी, यर्थाथवादी तथा निर्भीक लेखक एवं उपन्यासकार के रूप में जाने जाते हैं । राही जी ने अपने उपन्यासों में भारतीय समाज का वास्तविक रूप में चित्रण किया है । उनके उपन्यासों में ग्राम्य समाज से लेकर महानगरीय समाज तथा उच्च वर्ग से लेकर निम्न वर्गीय समाज का यथार्थ रूप में वर्णन मिलता है । डॉ० राही मासूम रज़ा ने आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत एक ओर हिन्दू-मुस्लिम एकता को दर्शाया है तो दूसरी ओर वर्ग-भेद तथा अछूत जातियों का भी स्पष्ट रूप से वर्णन किया है । उन्होंने किसी विशेष जाति के विषय में न लिखकर सम्पूर्ण जाति-व्यवस्था का वर्णन किया है । राही जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से इन वर्गों की परिस्थिति एवं समस्याओं का खुलकर वर्णन किया है ।

राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में उच्च वर्गीय समाज :-

राही जी ने आधा गाँव के अन्तर्गत सैयद घराने की पाक हडडी एवं उच्च वर्ग के अभिमान का वास्तविक रूप में चित्रण किया है । यह ज़मींदार लोग अपने उच्च वर्ग की शान में कुछ भी कर सकते हैं । इस उच्च वर्ग की शान के कारण इस वर्ग की सुन्दर लड़कियों का ब्याह भी कुरूप एवं बड़ी उम्र के लड़कों से कर दिया जाता है । सईदा उच्च जाति की है और कम्मो नीची जाति का है । दोनों एक दूसरे को प्रेम करते हैं किन्तु बोल नहीं सकते । क्योंकि एक सय्यद घराने की लड़की एक जुलाहा परिवार में कैसे ब्याही जा सकती है । इस बात को कोई समझ भी नहीं पाता । "जब सईदा चली जाती है तो कम्मो उदास हो जाता है । इस बात पर किसी ने ग़ौर इसलिये नहीं किया कि यह ग़ौर करने की बात ही नहीं थी । कहाँ अब्बू मियाँ की बेटी सईदा और कहाँ जवाद मियाँ का हरामी बेटा कम्मो !"01

यह उच्च वर्ग अपनी पाक हडडी की शान में ही नीची जाति की औरतों को अपने घर में डाल लेना अपनी शान समझता है । बछनिया, झंगटिया बो आदि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । झंगटिया-बो बला की खूबसूरत थीं । सुलैमान-चा पक्के मज़हबी थे । झंगटिया के साथ जब उसका ब्याह हुआ तब झंगटिया बो अठारह साल की थी और झंगटिया चार साल का । किन्तु झंगटिया के चेचक निकल आयी और वह विधवा हो गई । सुलैमान-चा ने उसे अपने घर में डाल लिया । "सुलैमान-चा मज़हबी आदमी थे, इसलिए वह झंगटिया-बो की छुई हुई कोई गीली चीज़ इस्तमाल नहीं कर सकते थे । इसलिए घर में एक औरत आ जाने के बाद भी सुलैमान-चा को अपना खाना खुद बनाना पड़ता था ।"02 अर्थात खरी हडडी वाले सुलैमान-चा झंगटिया बो के साथ सो सकते थे किन्तु कोई उसके हाथ का छुआ खा नहीं सकते थे । झंगटिया-बो जो सुलैमान-चा के तीन बच्चों को माँ भी थी । इस वर्ग के व्यर्थ के अभिमान कारण ही इस वर्ग की लड़कियों का विवाह नहीं हो पाता अतः शुद्ध हडडी में विवाह करने में इनका पूरा जीवन व्यतीत हो जाता है । इसके अतिरिक्त यह उच्च वर्गीय सय्यद घराना मज़दूरों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी बेगार कराते हैं और इनकी गुलामी में ही मर खप जाते हैं पर इस उच्च वर्ग के झूठे अभिमान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । झिंगुरिया, गया अहीर तथा कोमिला चमार जीवन भर इस वर्ग की गुलामी में रहे तथा इनकी गुलामी में ही जीवन समाप्त हो गया ।

विभाजन के पश्चात जब ज़मींदारी समाप्त होने लगती है तो इस उच्च वर्ग का अभिमान टूटने लगता है । "जब एक रात को बारह बजे डुग्गी बजी और ऐलान हो गया कि ज़मींदरियाँ खत्म हो गयीं हैं तो इस बात को ज़मींदारों की तरह बूढ़े किसानों ने भी तसनीम नहीं किया । ज़मींदारों ने चंदा जमा किया, उनके जलसे हुए । जलसों में रिज़ोल्यूशन पास हुए । मियाँ लोगों ने डटकर परुसराम की मुख़ालिफ़त की । परुसराम एम० एल० ए० हो गया गंगौली में उसका शानदार जुलूस निकला । वह सलाम करने मियाँ लोगों के फाटक पर आया । उस रोज़ अब्बू मियाँ, सिब्तू मियाँ, फुस्सू मियाँ और हुसैन मियाँ .....गरज़ कि पूरे सय्यद बाड़े को यक़ीन आ गया कि ज़मींदारियाँ ख़त्म हो गयीं । बटाई पर दी हुई सिर की ज़मीनें निकल गयीं । ये तमाम लोग देखते-देखते पल-भर में नूरुद्दीन शहीद के मक़बरे की तरह गिर गये ।"03

इस वर्ग के जवान लड़के अपने बूढ़े माँ-बाप एवं बीवी-बच्चों को छोड़कर पाकिस्तान चले जाते हैं । इस पाक हडडी का घमंड ज़मींदारी के साथ ही ख़त्म हो जाता है । यहाँ तक कि जवाद मियाँ के लड़के कम्मो के यहाँ सय्यद लड़कों को नौकरी करनी पड़ती है । इसी उच्च वर्ग की लड़कियों का ब्याह नीची जाति में करना पड़ता है और फुस्सू मियाँ को न चाहते हए भी मजबूरी में जूतों की दुकान खोलनी पड़ती है । परुसराम जैसे निम्न वर्ग के आगे इस उच्च वर्ग को मान-सम्मान देना पड़ता है । "इन लोगों के लिये पाकिस्तान का बनना या न बनना बेमानी था, लेकिन ज़मींदारी के ख़ात्मे ने इनकी शख़्सियतों की बुनियाद हिला दीं ।"04

उच्च वर्ग का अहंभाव हिम्मत जौनपुरी उपन्यास में भी दिखाई देता है । जहाँ शेखानियों का रुतबा ऊँचा है । "यहाँ शेखानियों के सामने दूसरी छोटी जाति की मुस्लिम औरतें ऊँचे स्थान पर नहीं बैठ सकतीं । 'दिलगीर जौनपुरी' बेगम बी से निकाह कर लेने के कारण आक कर दिये जाते हैं । 'दिलगीर' अपनी ससुराल वालों को कभी इज़्ज़त नहीं देता क्योंकि वह उन्हें नीची जाति का मानता है । और जब बेगम अपने अधिकारों की माँग करती है तो दिलगीर उसे तलाक दे देता है । जौनपुरी शेख सामाजिक तौर पर नीची जाति की औरतों को समानता नहीं देते ।"05

इसी उच्च जाति और ज़मींदारी के कारण ही फुन्नन मियाँ करामत अली खाँ की बीवी को उठा लाते हैं । यह करामत अली खाँ सय्यद अली कबीर के पुराने मुलाज़िम गुलाम हुसैन खाँ के छोटे भाई थे । "यह कुलसूम बला की खूबसूरत थीं । एक दिन फुन्नन मियाँ ने उसे देख लिया और उसे देखते ही उस पर एक जान छोड़ हज़ार जान से आशिक़ हो गये । जब हकीम साहब के छोटे भाई डिप्टी सय्यद अली हादी की बारात पारे के लिये इक्कों, हाथियों, पालकियों, खड़खड़ियों वगैरह पर रवाना हुई और दोनों पटियों में सन्नाटा हो गया, तो फुन्नन मियाँ करामत अली की दीवार पार कर गये । बारात की वापसी के बाद हंगामा हुआ । फ़ौजदारी हुई । फुन्नन मियाँ गिरफ्तार हुए लेकिन उन्होंने कुलसूम को अदालत में हाज़िर नहीं किया ।"06

उच्च वर्ग आर्थिक सम्पन्नता अथवा पूँजीपति होने के कारण स्वयं को सर्वशक्तिशाली समझता है और इसी आर्थिक सम्पन्नता के कारण वह अपने से नीची जाति के लोगों का शोषण करता है । इस समाज की आने वाली पीढ़ी इसी सर्वोच्चता के अहम में कुछ नहीं करती कि वह एक उच्च वर्ग में जन्मा है तो उसे कुछ करने की क्या आवश्यकता है ? फलस्वरूप वह बुरी आदतों का शिकार हो जाता है । अच्छन मियाँ इसी उच्च वर्ग का एक उदाहरण है । जो जनाब मुसलिम अली भूतपूर्व गृहमन्त्री साहब की इकलौती औलाद है । जिसकी सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वह एक उच्च खानदान का अकेला वारिस है । जिसमें उच्च वर्ग के शौक़ कूट-कूट कर भरे हैं :-

"बाहर की दुनिया से कोई वास्ता हो नहीं रखते थे । रंगीन मिजाज़ थे पर चाहते थे कि ये शौक़ भी घर की नौकरानी-दासियों आदि से ही पूरा हो जाए । गाँजा, चरस, अफीम सारे नशे बड़े शौक़ से करते थे और कभी तबियत होती तो लखनऊ की किसी रक्कासा के कोठे पे जा पहुँचते । रात-भर मुज़रा सुनते । एक बार तो एक कोठ पर बाक़ायदा पकड़े भी गए पर वो क्या था कि दारोगा मुसलिम मियाँ के पुराने दिनों का मुरीद था तो उसने नसीहत देकर छोड़ दिया । तो उनको इस बात से क्या फर्क़ पड़ता था कि लखनऊ में रहना हो या मदरसा खुर्द में । वे तो अपने नशे की पिनक में ही रहते थे । हाँ, जब भी मौक़ा मिलता नौकरानियों से छेड़छाड़ कर लिया करते ।"07

राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में मध्यवमर्गीय समाज :-

मध्यम वर्ग एक बुद्धिजीवी वर्ग माना जाता है जो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये निरंतर संघर्षरत रहता है । यह वर्ग सामाजिक प्रतिष्ठा को अत्यन्त महत्व देता ह । यह समाज अनेक समस्याओं का सामना करता हुआ आगे बढ़ता रहता है । स्वातंत्रता के बाद सबसे अधिक पतन मध्यम वर्ग का ही हुआ । इस वर्ग को आर्थिक रूप से अत्यंत संघर्ष करना पड़ा । आर्थिक समस्याओं ने इस समाज का जीवन निराशा से भर दिया है । यह वर्ग बेरोज़गारी, बेकारी, शिक्षा हतु संघर्ष एवं पारिवारिक रूप से अत्यंत संघर्षशील रहता है । राही मासूम रज़ा ने लगभग अपने सभी उपन्यासों में मध्यम वर्ग का चित्रण किया है ।

राही जी ने कटरा बी आर्ज़ू उपन्यास के अन्तर्गत मध्यम वर्गीय समाज का मार्मिक चित्रण किया है । यहाँ सपने हैं, दर्द है, भूख है पर उन सपनों को सच करने का तथा दर्द को दूर करने का कोई उपाय नज़र नहीं आता । यहाँ मनुष्य दिन-रात काम करते हैं किन्तु अपने काम के अनुरूप उन्हें पैसा नहीं मिलता । मँहगाई उन्हें खाये जा रही है । आशाराम मँहगाई भत्ता तथा बोनस के लिये हड़ताल करता है । सभी अपनी आँखों में सपना लिये बैठे थे । "आशाराम जानता था कि सामने बैठे लोग यह सोच रहे हैं कि वह उनके दुःखों, उनकी भूख, उनकी ज़रूरतों को खत्म करने का कोई टोटका बतायेगा और आँख झपकते ही दुनिया बदल जायेगी और बाबू साहब मुस्कुराते हुए आएँगे और मज़दूरियाँ बढ़ जायेंगी, महगाई भत्ता बढ़ जाएगा और बोनस मिल जाएगा ।"08

मध्यम वर्गीय समाज आर्थिक स्थिति मज़बूत करने के लिये एक-एक पैसा जोड़ता रहता है । यह समाज अनेक सपनों के साथ जीता है । उसी प्रकार से बिल्लो का भी एक सपना है कि उसका अपना एक घर हो ज़्यादा बड़ा न हो पर अपना घर हो । जिसके लिये वह थोड़े-थोड़े पैसे बैंक में जमा कर रही है । "देशराज और बिल्लो की शादी एक घर की वजह से रुकी हुई है, कि दोनों अपनी सारी बचत पोस्ट आफिस में जमा कर रहे हैं, कि छोटी-सी वह ज़मीन खरीदी जा सके जिस पर बिल्लो अपना घर बनाना चाहती है ।"09 बिल्लो दूरदृष्टि रखने वाली लड़की है इसलिये उसे देशराज का व्यर्थ पैसा खर्च करना बिल्कुल

पसन्द नहीं । "वह जानती थी कि साढ़े सात रुपये की रक़म कोई ऐसी रक़म नहीं होती कि उसके लिये ज़मीन आसमान एक किया जाये । पर जो यह साढ़े सात रुपये महीन-के-महीने पोस्ट आफिस में जमा होते तो घर कुछ पास ही आ जाता ।"10

इस समाज में घर के सदस्यों के अनुसार आमदनी न होने पर कभी-कभी पेट भर खाना भी नहीं मिलता यहाँ तक कि कभी-कभी तो भूखे ही रहना पड़ता है । पर यह समाज किसी के आगे अपने हाथ फैलाना अपने मान-सम्मान के विरुद्ध समझता है । राही जी ने यहाँ शम्सू मियाँ के माध्यम से इस स्थिति का चित्रण किया है ।

"आपका खाना कहाँ है ?" देश ने पूछा ।

"हमरा रोजा है ।"

"रोजा ?"

"अब हम हर महीने पच्चीस से तीस तक रोजा रक्खे लगे हैं ।"

"यह लीजिये ।" देश ने कहा, "आजे रोजा रखना था हम तो आपके वास्ते आलू भरता, बेसन की रोटी और मिरचे का अचार ....."

शम्सू मियाँ के मुँह में पानी आ गया । बोले, "अरे तो कोई वाजिब रोजा थोड़े है !"

देश को इन रोज़ों का हाल मालूम था, इसलिये वह दो आदमियों का खाना लाया था । पर वह अपने उस्ताद से कह तो सकता नहीं था कि उसे मालूम था कि आज उनके घर फ़ाक़ा है, इसलिये वह अपने साथ उनके लिए भी खाना लाया है ।"11

मध्यम वर्गीय समाज के अधिकतर परिवार की दशा अत्यंत दयनीय होती है । जहाँ कमाने वाला एक ही हो किन्तु खर्चा ज़्यादा हो तो यह एक बड़ी समस्या बन जाती है । "शम्सू मियाँ के पास न जान थी न माल । एक बेटा था अब्दुल हक़ । वह अपनी बीवी के बहकावे में आकर पाकिस्तान चला गया था । पर उसकी जवानी पाकिस्तान चली गई और शम्सू मियाँ की बुढ़ौती ने वहाँ जाने से इन्कार कर दिया । अब बचीं महनाज़ और शहनाज़ । महनाज़ की शादी ए० जी० आफिस के क्लर्क से हो गई । तनख्वाह तो ज़्यादा नहीं थी, पर अल्लाह के फ़ज़्ल से ऊपर की आमदनी अच्छी थी । महनाज़ बहुत खुश थी । फिर एक दिन, कि अल्लाह मियाँ ने वह दिन शम्सू मियाँ के इम्तिहान के लिए तै कर रखा था, महनाज़ बेवा

हो गयी । उसका बेवा हो जाना खुद अपनी जगह शम्सू मियाँ के लिये अफ़सोस की बात थी, पर सेर पर सवा सेर यह हो गया कि महनाज़ अपनी दो बच्चियों के साथ मायके आ गयी क्योंकि उसकी ससुराल वालों ने उसे रखने से इन्कार कर दिया था । आमदनी वही । महँगाई बढ़ी हुई और ऊपर से तीन पेट और बढ़ गये । अल्लाह मियाँ यहाँ तक इम्तिहान लेकर बस करते तब भी ग़नीमत । पर वह कहाँ रुकने वाले हैं पूरा इम्तिाहन लिए बिना ! उन्होंने शहनाज़ को कालरे या टायफ़ायड या टी० बी० या कैंसर में मार डालने की जगह उसे जवान कर दिया । सकीना बी उर्फ सुक्कन उठते-बैठते अल्लाह मियाँ को अपनी तरफ़ से समझाती रहती थीं कि शहनाज़ मर गई होती तो अच्छा होता अब भी मर जाए तो बुरा नहीं ।"12

इस वर्ग का नौकरी करने वाला व्यक्ति महीने की पहली तारीख की प्रतीक्षा करता है । किन्तु इस वर्ग के लिये पहली और तीस में कोई फर्क नहीं है । "खाते-खाते शम्सू मियाँ ने कहा, "आमदनी ओही दूसौ अटठाइस और बजार का हाल ई कि हरा धनिया जाफरान के भाव । पहिले के जमाने में महीने की तीस और पहली में फ़रक़ होता रहा । अब जैयसी तीस, वैसिये पहली । कलंडर तो खाली दीवार सजाये क काम आता है ।"13

मध्यम वर्ग समाज से हटकर कार्य करना पसन्द नहीं करता वह शादी-ब्याह जैसे शुभ कार्य सामाजिक रीति-रिवाजों के साथ ही करता है । यह वर्ग समाज के रीति-रिवाजों को अधिक मान्यता देता है । इन रिवाजों के चक्कर में ही मास्टर बदुल हसन और शहनाज़ की शादी नहीं हो पा रही थी । मास्टर साहब के पास वलीमा करने के पैसे नहीं जुड़ रहे थे और शम्सू मियाँ के पास दहेज की जुगाड़ नहीं थी । "मुझे लगता है हमारी शादी शायद ही हो सके । दहेज और वलीमा हमारी दुनिया में हमारी मुहब्बत से बड़ा है ।"14 मास्टर बदर मेहमान की फेहरिस्त को लम्बी होने से नहीं रोक पा रहे थे । फिर उसने सोचा कि नानबाई की दुकान पर जाकर ही मीनू में कुछ कम-बढ़ कर लिया जाये । उसने दो से तीन मीनू बनाये किन्तु सब बजट के बाहर ।

"बकरे का कोरमा

बकरे का क़लिया (आलू या अरबी वाला)

शीरमाल

आबी रोटी

पुलाव

शाही टुकड़े

मुज़ाफ़र

किन्तु बिल बना सवा छः हजार का । फिर उसने अपने बजट में मीनू तैयार किया ।

"बड़े का क़लिया

आवी रोटी

पुलाव

फीरिनी

बजट : साढ़े तीन सौ के लिये : दो हज़ार आठ सौ ।

चार सौ के लिये : तीन हज़ार दो सौ ।

"मोल्वी ख़ैराती को बताए बिना उसने यह तीसरा मीनू पसन्द कर लिया था । और उसने यह भी तै कर लिया था कि अब्बा चाहें बुरा माने या भला, मेहमानों की फ़ेहरिस्त को खैंच-तानकर वह तीन सौ तक ले ही जायेगा ।"15

धर्म के प्रति इस समाज की गहरी आस्था होती है । जब भी यह समाज दुःखी होता है तो उस समय भगवान का स्मरण कर स्वयं को संतुष्ट कर लेता है । मास्टर बदर और शहनाज़ की शादी किसी भी तरह से नहीं हो पा रही थी इसलिये शहनाज़ बदर को खुद को उसके साथ निकाल ले जाने की बात करती है । "मैं तुम्हे निकाल ला सकता हूँ । फिर कटरा मीर बुलाकी छोड़ना पड़ेगा । नौकरी से निकाल दिया जाऊँगा-नौकरी है तब तो खर्च चलता नहीं । नौकरी भी न होगी तो क्या करेंगे-मैंने नमाज पढ़ना शुरु कर दी है । तुम भी पढ़ा करो और दुआ माँगो कि एक बार 'शमा' का पहला इनाम मिल जाये ।..... "16

मध्यम वर्गीय शम्सू मियाँ को अपनी बेटी महनाज़ का दूसरा विवाह अपनी उम्र वाले जोखन मियाँ के साथ मजबूरी में करना पड़ता है जिसे महनाज़ के बच्चे नाना बुलाते हैं । पर शम्सू मियाँ को उन तीनों का पेट पालना असम्भव हो रहा था

। "क्योंकि दो बच्चों की माँ होने का मतलब यह नहीं था कि महनाज़ बूढ़ी हो गई है । क्योंकि उसके माँ-बाप जोखन से महनाज़ शादी इसलिए नहीं कर रहे थे वह इसे मुनासिब समझते थे बल्कि यह शादी वह इसलिए करना चाहते थे कि महनाज़ और उसकी दोनों बच्चियों, फ़त्तो और उम्मन को दो वक़्त खाना खिलाना उनके लिए सम्भव नहीं था । - यह बड़ा बेदर्द एहसास था ।"17

राही जी ने अपने उपन्यासों में बड़े शहर में निवास करने वाले मध्यम वर्गीय समाज का भी यथार्थ चित्रण किया है । बड़े शहरों में नौकरी और रहने के लिये घर दोनों का मिल पाना बड़ा ही मुश्किल है । 'सीन : 75' उपन्यास में राही जी ने फिल्मी वातावरण के साथ बेरोज़गारी का भी चित्रण किया है । अली अमजद एक लेखक है । बम्बई आकर वह फिल्में लिखने लगता है । बम्बई जैसे महानगर में वह भी स्वयं को अन्य मध्यम वर्गीयों के समान असंतुष्ट पाता है ।
वह अच्छी फिल्में लिखना चाहता है किन्तु उसे मजबूरी में घटिया फिल्में लिखनी पड़ती हैं । यहाँ तक कि वह स्वयं को इंडस्ट्री को बेच देता है ।

"रोशनाई के लिए अपने को बेचा किये हम ।
ताकि सिर्फ इसलिए कुछ लिखने से बाकी न रहे,
कि क़लम खुश्क थे,
और लिखने से माज़ूर थे हम।
माज़ूर ।
मजबूर ।
बेबस ।"18

इस समाज में दिखावे की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है । यह स्वयं को उच्च वर्ग के अधीन करने के प्रयास में लगा रहता है । एक क्लर्क की पगार ही क्या होती है ? भोलानाथ खटक एक क्लर्क हैं जो एलेक्ट्रानिक्स की कम्पनी में बिल-कलक्टर थे तथा उनकी पगार एक सौ बानवे रुपये थी । एक दिन अपना रौब जमाने के लिये खटक जी श्री वास्तव जी को क्वालिटी रेस्तराँ में खाने के लिये ले जाते हैं । जहाँ वह अपनी दस साल की

नौकरी में कभी नहीं गये थे । "सत्तासी रुपये सोलह पैसों का बिल आया । वह तो खैरियत यह हुई कि खटक बिल वसूलने के दौरे से लौटे थे, इसलिये जेब में पैसे थे । और जब खटकजी ने वेटर के लिये पाँच तिरानवे रुपये खर्च तो हो गये, पर कालोनी पर धौंस भी बैठ गयो ।"19 उसी प्रकार रमा का व्यक्तित्व में भी झूठा प्रदर्शन झलकता है । जो दुकानों में साड़ी खरीदने के बहाने जाती और वहाँ आयी हुई अमीर औरतों को बातों में लेकर उनसे दोस्ती कर लेती है । दोस्ती हो जाने के बाद जब वो औरतें उससे घर का पता पूछती तो उसे अपना पता बताने में शर्म आती । "यह कहने में सुबकी होती थी कि ग्रेड फोर आफिसर्ज़ हाउसिंग सोसायटी में रहती है । तो कहती क्या बताऊँ बहन जी बम्बई में कहीं रहने को जगह मिलती है ? तीन फ्लैट बुक करवा रक्खे हैं । एक पेडर रोड पर, एक कफ़ परेड पर और तीसरा जूहू में । पर बन नहीं चुकते किसी तरह । एक सम्बन्धी के साथ टिके हुए है बान्द्रा ईस्ट में ।"20

मध्यम वर्गीय समाज की सबसे बड़ी मानसिकता है रोज़गार । जिसके लिये वह शहर की ओर पलायन करता है तथा शहर में वह नौकरी के लिये अनेक कठिनाइयों का सामना करता है । शहर के नौजवान नौकरी न मिलने पर कभी-कभी ग़लत चक्करों में भी पड़ जाता है । इसी कारण वी० डी० भिखमंगों की एक यूनियन बनाता है । "हिन्दुस्तान के लोगों को भीख देने और भीख माँगने का शौक़ है । जो भीख दे नहीं सकता वह किसी न किसी स्टाइल में भीख माँगने लगता है "21 उसका मानना है शिक्षित लोग अभी तक इस बात से अंजान हैं । "बात क्या है कि भीख माँगने की तरफ़ अभी तक पढ़े-लिखे लोगों का ध्यान नहीं गया है ? अब तक यह रैकेट गुण्डों के हाथ में था और तुम जानो, गुण्डों मे कोई ऐस्थेटिक सेंस सो होता नहीं । किसी की आँखे फोड़कर उसे अंधा फ़कीर बना दिया । किसी की टाँगे तोड़ दीं .....वग़ैरा-वग़ैरा । एक दिन लेटे-लटे ब्रेन-ब्रेव कि भीख माँगने के काम को साइण्टिफ़िक तरीके से आर्गनाइज़ किया जाये तो बहुत माल मिलेगा ।....."22 इस तरह के घटिया व्यवसाय का अंजाम सदैव बुरा ही होता है । वी० डी० गुण्डों के हाथों मारा जाता है ।

डॉ० राही मासूम रज़ा ने अपने उपन्यासों में पाठक का ध्यान मुख्य रूप से मध्यमवर्ग की ओर आकृष्ट किया है । बेरोज़गारी मनुष्य को मजबूर बना

देती है । इतना मजबूर कि उसे अपना हुनर, अपनी पहचान तक बेच देना पड़ती है । "उसे कहानी बेचनी थी । कहानी बेचनी थी, क्योंकि उसे पैसों की ज़रूरत थी । पैसों की उसे सख़्त ज़रूरत थी क्योंकि उसे बनिये का तीन महीने का हिसाब चुकाना था । बनिये का हिसाब चुकाना था क्योंकि उसने उधार देने से मना कर दिया था....." 23

आर्थिक समस्याओं के कारण इस वर्ग में रिश्तों की डोर कमज़ोर होती दिखाई देती है । अर्थ की कमी मनुष्य के स्वभाव को चिड़चिड़ा बना देती है । इस वर्ग की महिलाएँ भी इन समस्याओं से जूझती हैं । रफ्फ़न उर्फ बाग़ी आज़मी जो एक अच्छा कवि हुआ करता था इस कवि से जन्नत बहुत प्यार करती है जो रफ्फ़न की पत्नी है । जब घर चलाने में दुश्वारी आयी तो रफ्फ़न को मजबूरी में उपन्यास लिखना पड़ता है । जन्नत चाहती थी कि उपन्यास जल्द से जल्द ख़त्म हो जाये । "वह तो चाहती थी कि उपन्यास ख़त्म करो कि घर में पैसे आयें । बाक़ी बिलों, तक़ाज़े के ख़तों से जान छूटे । उपन्यास बिस्तर की चादर, गेहूँ की बोरी, नमक का पैकट, लौंग की पुड़िया और चाय का डिब्बा बन जाये । जन्नत को किसी की नज़्म का यह टुकड़ा डंक मारता रहता । रोशनाई के लिये अपने को बेचने का मतलब क्या है ?..... ख़राब लिखो, ख़राब लिखो, ख़राब लिखो.....घर का किराया देना एक अच्छी नज़्म लिखने से ज़्यादा बडा काम है । बिजली का बिल भरना एक अच्छी कहानी लिखने से कहीं ज़्यादा ज़रूरी है । पाठकों के तारीफ़ भरे ख़त गर्म चाय की एक प्याली नहीं बन सकते । एक रुपये का नोट नहीं बन सकते....."24

राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में निम्न वर्गीय समाज :-

इस समाज का मनुष्य ग़रीबी के कारण लाचार और मजबूर है । यह समाज अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरा रहता है । अशिक्षित होने के कारण यह वर्ग आचार-व्यवहार में अन्य समाजों से अलग होता है । इस समाज के युवक संस्कार विहीन होने के कारण ग़लत आदतों का शिकार भी हो जाते हैं । इस समाज में नाई, माली, लुहार

धोबी आदि आते हैं । इसके अतिरिक्त इस वर्ग में ऐसे भी लोग हैं जिनके पास घर नहीं है जो विवश हो सड़कों आदि पर रहते हैं । वैश्या, भिखारी आदि इसी वर्ग में आते हैं ।

राही मासूम रज़ा अपने उपन्यासों में इस समाज का चित्रण करने में सफल हुए हैं । आधा गाँव उपन्यास में इस समाज का चित्रण हुआ है । इस समाज के अन्तर्गत राकी, जुलाहे, चमार आदि का चित्रण मिलता है । राही जी ने आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत जुलाहों के परिवेश का चित्रण कुछ इस प्रकार किया है । "बँसवाड़ी की जड से पूरब की तरफ़ जानेवाली गली के दोनों तरफ़ जुलाहों के घर हैं । जुलाहे खटिया डाले हुक्क़ा पी रहे थे । एक तरफ़ दस-बारह साल का लड़का फ्रेम में मुख़्तलिफ़ रंग के धागों की बड़ी-बड़ी रीलें लगाये, ज़मीन पर थोड़े-थोड़े फ़ासले से बाँस की सलाखें गाड़े, रील के धागों उनके गिर्द लपेट रहा था ।"25

अनवारुल हसन राकी का लड़का फ़ारूक अब्बास का सीनियर था । दोनों अलीगढ़ साथ में पढ़ते थे । मोहर्रम में जब अब्बास गंगौली आता है तब फ़ारूक़ से मिलना चाहता है । "वह तो अपनी इस गंगौली में फ़ारूक को फ़ारूक भाई भी नहीं कह सकता था । किसी सय्यद ज़मींदार का लड़का किसी राक़ी बच्चे को भाई कैसे कह सकता है !"26 कोमिला चमार, गया अहीर तथा झिंगुरिया द्वारा राही जी ने निम्न वर्गीय समाज के मज़दूरों की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है जिनसे उच्च वर्गीय समाज पीढ़ी-दर-पीढ़ी बेगार कराते हैं और यह लोग बिना कुछ कहे सब कुछ सहन करते रहते हैं ।

लेखक ने इस समाज में जीवन व्यतीत कर रहे भिखारियों के भीख माँगने की मजबूरी तथा उनकी दयनीय स्थिति का भी उल्लेख किया है । "इतवारी बाबा तब इतने बूढ़े नहीं थे । चालीस-पैंतालीस के फेंटे में रहे होंगे । पर वह उन दिनों भी भीख माँगा करते थे । हफ्ते में छः दिन भीख माँगने के बाद सातवें दिन आराम किया करते थे और शायद यही कारण है कि लोग उन्हें इतवारी बाबा कहने लगे ।"27 उसी प्रकार रामदीन का परिवार था । रामदीन मज़दूर था । ईंट-चूना उठाने का काम करता था । एक घर की छत बैठ जाने के कारण उसके हाथ पाँव बेकार हो गये । उसका बाप भी मर चुका था । रामदीन का उसकी माँ के सिवा और कोई नहीं था । रहने, खाने-पीने की परेशानी होने लगी तो इतवारी

बाबा ने रामदीन की अम्मा को पहली शिफ्ट पर बिठला दिया । "पर रामदीन की अम्मा को तो भीख माँगना भी नहीं आता था । उससे हाथ फैलाया नहीं जाता था । तो इतवारी बाबा ने उससे कहा कि उसे हाथ फैलाने की ज़रूरत ही नहीं है । बस एक प्याला सामने रखकर वह सड़क की तरफ़ पीठ करके चुपचाप बैठ जाए । राम दीन की अम्मा यही करने लगीं ।"28

राही जी ने इतवारी बाबा के माध्यम से इस समाज की वैचारिक स्थिति तथा संवेदनशीलता का उल्लेख किया है । वे मजबूर लोगों की मदद भी करते हैं । "बैंक में बारह हजार तीन सौ सत्ताइस चौबीस पैयसा नकद है । हम लिखवा दिया है कि हमरे मरे के बाद हमरा कियाकर्म तो चन्दे से किया जाए केह मारे कि अपनी कमाई का कफ़न पहिने में हम्में सरम आएगी । और हमरी राख कटरा मीर बुलाकी, मतलब कटरा श्रीमती गाँधी की कउनो गन्दी नाली में बहा दी जाये कि ओके गन्दे पानी में मिलके गंगा के पानी में मिल जाना चाहता हूँ । खैर ई तो अलग बात हो गई । ऊ जो बारह हजार तीन सौ हैं ओमें से हजार रुपया फकीरों को बाँटे वास्ते हैं ।"29

इस समाज का एक बड़ा भाग है वैश्या वृत्ति और उसी के समान है रखैल रखना । राही जी ने इस समाज की ऐसी महिलाओं का भी सफल चित्रण किया है । इसके पीछे या तो इनकी मजबूरी होती है या परम्परागत रूप से चली आ रही प्रथा का अनुकरण करती हैं । । नथ उतारने की प्रथा इस बात की ओर इंगित करती है । "वह क्या खाकर गुलाबी जान का नथ उतारेगा ! भाई साहब मरहूम ने उसकी बड़ी बहन का नथ उतारा था, बाबा मरहूम ने उसकी खाला का नथ उतारा था, इसलिये गुलाबी जान का नथ मैं उतारूँगा ।"3। उसी प्रकार सैफुनिया नाइन, मेहरुनिया, बछनिया आदि सय्यद घरानों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी रखैल होती आयी हैं । इस कारण यह समाज इन सब बातों को अपना भाग्य मान कर स्वीकार कर लेता है । सय्यदों के साथ यौन-सम्बन्ध रखतीं हैं और इस चीज़ को वे बुरा नहीं मानती क्योंकि वे जानती हैं यह सब उनके समाज का एक कड़वा सच है । यथा : "यह गुलाबी जान कटटर मुसलमान थीं । ठाकुर साहब के कमरे से जाकर वह फ़ौरन नहाती थीं और अललाह मियाँ से माफ़ी माँगतीं थीं कि पेट की वजह से उसे एक काफ़िर के साथ सोना पड़ता है ।"32

टोपी शुक्ला उपन्यास में भी इस समाज का चित्रण हुआ है । "आप बड़े भोले हैं ।" बिस्मिल्लाहजान ने मुस्कराकर कहा । "आपको क्या पता कि कौन रंडी है और कौन रंडी नहीं है । मैं आपको इस बाज़ार में न मिलती तो क्या आप मुझे रंडी मानते ? क्या यह बात मेरे माथे पर लिखी है कि मैं रंडी हूँ ।"33 इस समाज की बेबस महिलाएँ अपना पेट पालने के लिये अपना जिस्म बेचती हैं । ये लोग चाह कर भी अपने इस पेशे और इस समाज को नहीं त्याग सकतीं ।

राही जी ने समाज से उपेक्षित इन स्त्रियों की दयनीय स्थिति का वर्णन किया है । यह समाज का ही एक हिस्सा हैं, किन्तु फिर भी समाज में इज़्ज़त के साथ रहने का इन्हें कोई अधिकार नहीं है । हिम्मत जौनपुरी उपन्यास में लेखक ने इमामबाँदी के माध्यम से वश्याओं की पर प्रकाश डाला है । "वैश्याओं की सामाजिक स्थिति भारतीय समाज में दयनीय है । तमाम नारी आन्दोलनों के चलते उनकी दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है । आखिर उनके वैश्या बनने में किसका हाथ होता है ? ऐसी औरतों का समाज में क्या योगदान है । वे एक बार कोठे पर पहुँचने के बाद समाज में फिर वापस नहीं आ सकतीं ।"34

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में मुस्लिम समाज :-

डा० राही मासूम रज़ा ने अपने उपन्यासों में हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों समाजों का यथार्थ रूप में वर्णन किया है । किन्तु राही जी ने हिन्दू समाज की अपेक्षा मुस्लिम समाज की जीवन-शैली, क्रिया-कलाप आदि की ओर अधिक ध्यान दिया है । इस समाज के अन्तर्गत आने वाली छोटी-बड़ी जातियों का भी राही जी ने अति सूक्ष्मता के साथ परिचित कराया है । राही जी के उपन्यासों में मुस्लिम समाज का वास्तविक रूप दृष्टिगोचर होता है ।

'आधा गाँव' उपन्यास की कथा किसी एक विषय को उजागर नहीं करती किन्तु इसकी कथावस्तु शिया मुस्लिम समाज में मनाये जाने वाले त्यौहार मुहर्रम के इर्द-गिर्द घूमती है । यह शिया मुसलमानों का बहुत ही बड़ा और पवित्र त्यौहार माना जाता है

। उपन्यास के आरंभ से लेकर अंत तक मोहर्रम का ज़िक्र होता रहा है । उपन्यास की कथा मोहर्रम की तैयारियों से ही शुरु होती है - "बक़रीद के बाद ही से मोहर्रम की तैयारी शुरु हो जाती । दद्दा मरसिये गुनगुनाना शुरु कर देने, अम्माँ हम सबके लिये काले कपड़े सीने में लग जाती; और बाजी नौहों की बयाज़ें निकाल कर नयी-नयी धुनों की मश्क करने लगतीं । नौहों की धुनें इस एहतियात से बनायी जाती थीं कि सिवैयाँ शरमा जायं ।"35

शिया मुस्लिम समाज में यह बात मानी जाती है कि मोहर्रम में इमाम हुसैन हिन्दुस्तान आते हैं । यह स्वयं को इमाम हुसैन का वंशज मानते हैं । राही जी स्वयं शिया मुस्लिम परिवार से थे इसलिये उन्होंने मोहर्रम के समय होने वाली प्रत्येक गतिविधि का विस्तारपूर्वक चित्रण किया है । मोहर्रम राही जी के मन-पसंद त्यौहारों में से एक रहा है । मुहर्रम की दीवानगी पूरे मुस्लिम समाज में दिखायी देती है । मोहर्रम के दिनों में शिया मुसलमानों में मजलिसें होती हैं । मरसिये पढ़े जाते हैं । इन मरसियों में इमाम हुसैन का नाम आना ही काफी होता है । इमाम हुसैन का नाम आते ही औरतें रोना शुरु कर देतीं हैं । "शायरों की बुराई ही में कहीं इत्तफ़ाक से इमाम हुसैन का नाम आ गया । ज़नाने फ़र्श से 'हाय मोरे मौला'कहकर रोने की आवाज़ आयी । यह आवाज़ फूफी की थी । अबबा झट से अंदर आ गये । फूफी बाक़ायदा मुँह ढाँपे रो रहीं थीं । अब्बा ने कहा, "बहन.. इमाम हुसैन की पैदाइश की महफिल है ।"

"अरे, ऊ पैदा ना हुए होत त कर्बला में काहे शहीद भये होत... ए भैया..." फूफी ने अपने बैन में ही यह टुकड़ा लगा दिया । उनके इस तर्क ने गाज़ीपुर की अदालत दीवानी के सबसे बड़े वकील की ज़बान बंद कर दी । इसलिए अगर रोने के लिये सिर्फ हुसैन का नाम काफी है तो इससे क्या गरज़ कि मजलिस पढ़ने वाला क्या कह रहा है ।"36

मोहर्रम में बेहोश होना, मातम करना, छाती पीटना, आग पर चलना विभिन्न प्रकार से अपने शरीर को यात्नाएं देने में यह शिया सम्प्रदाय अपने जीवन की सार्थकता समझता है । राही जी ने मुस्लिम समाज की इन गतिविधियों का बहुत सच्चाई के साथ चित्रण किया है । मोहर्रम के अवसर पर राही स्वयं और उनका पूरा परिवार गंगौली आ जाया करता था

। बेहोश होना भी एक कला मानी जाती ह । उत्तर-पटटी एवं दक्खिन-पटटी के लड़कों में इस बात की स्पर्धा होती ।

इस विषय में राही जी लिखते हैं - "बस, सवाल रह जाता बेहोश होने का-उत्तर पटटी में मश्शू भाई को मातम करते-करते बेहोश हो जाने की कला आती थी । वह आठवीं और 'शामें-ग़रीबाँ' की मजलिस में हर बार बेहोश हो जाते था । हमारी पटटी में कोई बेहोश होने वाला नहीं था, इसीलिये जब हकीम अली, कबीर या रशीद मियाँ या उत्तर पटटी का कोई बुज़ुर्ग बेहोश मश्शू भाई के मुँह पर केवड़ा छिड़कता तो दक्खिन पटटी के लड़कों और जवानों पर घड़ों पानी पड़ जाता । सब सोचते कि लानत है हम पर ! यानी हम अपनी पटटी की मजलिस में बेहोश तक नहीं हो सकते, इसलिये बक़रीद के बाद से ही मैं बेहोश होने की मश्क़ करने लगता । मगर जब बेहोश होकर गिरता तो बड़ी चोट लगती और मैं भाई साहब के साथ सिर जोड़कर बेहोश होकर गिरने की तरकीब निकालने में जुट जाता, जिसमें चोट न आये । सभी लड़के रिहर्सल में लगे रहते थे । मगर हर साल होता यही कि मश्शू भाई बेहोश हो जाते और हम लोग मुँह देखते रह जाते ।"37

मोहर्रम मुस्लिम समाज में एक शोकपर्व के रूप में मनाया जाने वाला त्यौहार है । जो इस समाज के पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के नवासे इमाम हुसैन के शहीद दिवस के रूप में मनाया जाता है । जिसमें किसी भी प्रकार के हँसी-मज़ाक या कोई भी शुभ कार्य करना मना है । "सवेरे ही सवेरे उसने नज्जन से कहा कि अब दिलआरा और सितारा की शादी कर देना चाहिये । "भलीमानस, मोहर्रम ही रह गया ह शादी-ब्याह की बात करने को ?"38 इस प्रकार हम देखते हैं कि राही जी ने मोहर्रम में होने वाली बैठकों, मातमों के माध्यम से शिया समाज के जीवन पर प्रकाश डाला है ।

मुस्लिम समाज में नमाज़ पढ़ना अनिवार्य माना गया है । राही जी ने नमाज़ पढ़ने, वुज़ू करन आदि का भी चित्रण किया है । "हकीम साहब ने नाक धोते हुए कहा । "बाक़ी ओठरा कउन खोजिस ? "उन्होंने नमाज़ की चौकी पर बैठते हुए पूछा । फिर वह 'अल्लाहो-अकबर' कहकर जा-नमाज़ बिछाने लगे । "अल्लाहो-अकबर !" हकीम साहब ने नमाज़ की नीयत बाँध ली ।"39

मुस्लिम समाज के अंतर्गत आने वाली हर छोटी-बड़ी बात का राही जी ने बड़ी ही ईमानदारी के साथ चित्रण किया है । यहाँ हम देखते हैं कि मुस्लिम समाज में केवल रक्त संबन्ध को महत्व दिया जाता है । अर्थात एक ही माँ-बाप की संतानें आपस में विवाह नहीं कर सकते किन्तु इसके अतिरिक्त चाचा, ताऊ तथा बुआ आदि के बच्चों का विवाह आपस में हो सकता है । इसी कारण इन लोगों में अनैतिक संबन्ध आदि विकसित होते दिखाई देते हैं । इस स्वतंत्र प्रवृत्ति के कारण ही यहाँ मुस्लिम परिवारों में कितनी लड़कियाँ शादी से पहले गर्भवती हो जाती हैं ।

लेकिन सुलैमान के आने से कोई दो दिन पहले झंगटिया-बो की निगाह बच्छन में होने वाली तब्दीली पर पड़ ही गयी । वह सन्नाटे में आ गयी । उसका खून खौलने लगा । बछनिया का झोंटा पकड़कर उसने दो-तीन तमाचे मारे और बोली, "मरकीनौनी ! आपन बाबू का ईहे पेट देबे ! बोल ई केकर होइ ?" बच्छन बहत हैरान हुई कि उसका पेट किसी और का कैसे हो सकता है । "हमारा है अऊर के का है !"

"तोहार हा !" झंगटिया-बो ने उसे दो-तीन तमाचे और मारे ।

"हम तोहार बाबू के का मुँह देखाइब रे ! " का कहब उनसे माटीमिली ?"40 राही जी ने आधा गाँव के अन्तर्गत इन सभी पहलुओं का बहुत ही वास्तविकता के साथ चित्रण किया है ।

मुस्लिम समाज में दूसरा ब्याह करना अथवा एक से अधिक बीवियाँ रखना मान्य है । क्योंकि इस्लाम धर्म बहु-विवाह की इजाज़त देता है । ठाकुर साहब जब भी अकेले में समीउददीन खाँ से मिलते तो इस्लाम का खूब मज़ाक उड़ाते हुए कहते - "वाह यह भी कोई मज़हब हुआ कि खुद तो पैग़म्बर साहब ने नौ-नौ ब्याह कर डाले और बाक़ी मुसलमानों को चार शादियों पर टरका दिया ।" समीउददीन खाँ तड़ से जवाब देते, "ठाकुर साहब, यह तो कमर के बूते की बात है । "आँ हज़रत' ने ऐसी-वैसी हरकतों में अपनी ताकत हमारी तरह लुटायी होती, तो वह भी चार से ज़्यादा शादियाँ न करते । अरे साहब, आजकल तो एक सँभालना मुश्किल हो गया है । लेकिन पाँच भाइयों में एक बीवी से काम नहीं चल सकता । यह भी कोई कमर हुई ? उनसे अच्छे तो हमीं हैं चार भाइयों में कुल मिलाकर सात बीवियाँ हैं

। एक मेरी, तीन भाई साहब की और तीन मँझले भाई की, चौथा भाई अभी कुँवारा है । दो-चार बीवियाँ वह भी रखेगा ही । ऊपर की आमदनी अलग ।"41

उपन्यासकार ने यहाँ यौन संबन्धी नैतिकता का वर्णन कुछ इस रूप में किया है - "दूसरा ब्याह कर लेना या ऐरी-ग़ैरी औरत को घर में डाल लेना बुरा नहीं समझा जाता था, शायद ही मियाँ लोगों का कोई ऐसा ख़ानदान हो जिसमें क़लमी लड़के और लड़कियाँ न हों । जिनके घर में खाने को भी नहीं होता, वे भी किसी न किसी तरह क़लमी आमों और क़लमी परिवारों का शौक़ पूरा कर ही लेते हैं ।" 42

डा० ज्ञानचद गुप्त आधा गाँव में चित्रित मुस्लिम समाज के यौन संबंधों के बारे में लिखते हैं - "लेखक की बेलाग दृष्टि गाँव के उन यौन संबंधों के चित्रण में खूब रमी है जिससे मुस्लिमों के सेक्स संबंधी रुझान का तो पता चलता ही है कि वे कितने रोमानी हैं ।"43

राही जी ने अनैतिक संबन्ध और उनसे उत्पन्न अवैध संतानों का भी बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ वर्णन किया है । जब मिग़दाद और सैफुनिया के संबन्धों के बारे में महरुनिया को पता चलता है तो वह हम्माद मियाँ को जाकर बोल देती है कि सैफुनिया हम दोनों की औलाद है । हम्माद मियाँ सोच में पड़ जाते हैं क्योंकि सैफुनिया की माँ महरुनिया के साथ हम्माद और न जाने कितनों के सम्बन्ध थे । "तोरे पास का सबूत है कि सैफुनिया हमरिए है ?" उन्होंने महरुनिया से सवाल किया ।

"सबूत तो कोनो ना है ।" महरुनिया ने कहा ।

"सैफुनिया मंज़ूर, वज़ीर, फुस्सू, हादी और सुलैमान कोई को हो सकती है ।"

"बाक़ी ऊ कोई की है ना ।" महरुनिया ने इस यक़ीन के साथ कहा कि हम्माद मियाँ लरज़ गये ।"44

यद्यपि यह समाज अपनी लड़कियों के ब्याह के समय लड़के की खरी हडडी होने पर ध्यान देता है । इस समाज के पुरुषों को अनैतिक सम्बन्ध रख हरामी औलाद पैदा करने में कोई आपत्ति नहीं किन्तु रिश्ता उनको खरी हडडी वाला चाहिए । "मियां लोगों की यह विवशता, उनकी लड़कियों को ताक-झाँक करने तथा घर छोड़कर अपने यार के साथ

भाग जाने के लिए प्रेरित करती रही । हर घर में अनब्याही लड़कियों की अच्छी खासी तादाद थी । घुटते रहना नियति थी । अपने लिए मियाँ लोग घर की खलबतों को बराबर आबाद करते रहे । घर में प्रायः एक जुलाहिन घर की शोभा बढ़ाती रही ।"45

इस्लाम धर्म जातिगत भावनाओं का विरोध करता है किन्तु आधा गाँव में शिया मुस्लिम समाज में यह भावना दृष्टिगोचर होती है । सैयद लोग जुलाहे, राकी, शेख आदि के प्रति भेद-भाव रखते हैं । ये छोटी जाति के लोग सैयद लोगों के साथ उठ-बैठ नहीं सकते । "नईमा दादी बहरहाल जुलाहिन थीं और सैदानियों के साथ नहीं रह सकती थीं । पुराने ज़माने के लोग इसका बड़ा ख़याल रखा करते थे कि कौन कहाँ बैठ सकता है और कहाँ नहीं ।"46 उसी प्रकार अब्बास अली सैयद है और फ़ारूक सिद्दीकी राक़ी । अलीगढ़ में दोनों साथ में पढ़ते हैं । गाँव आने के बाद वह फ़ारूक से उसके घर जाकर मिलना चाहता है किन्तु ऊँची जाति होने के कारण वह उससे मिलने नहीं जा सकता । "इसलिये उसने सोचा कि मियाँ लोगों की गैरहाज़िरी का फ़ायदा उठा कर वह अनवारुल हसन राक़ी के लड़के फ़ारूक से क्यों न मिल आये, जो अलीगढ़ में ही पढ़ता था । मियाँ लोगों के सामने तो वह रक़ियाने जा नहीं सकता था । बड़े जूते पड़ते ··· "मियाँ अब्बू तम इतने बड़े हो गये और तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि अशराफ़ राक़ियों-वाक़ियों के दरवाज़े नहीं जाते ।"47

इसी जातिगत भेदभाव के कारण सईदा और कमालुद्दीन एक-दूसरे से विवाह नहीं कर सकते क्योंकि सईदा सैयद है और कमालुद्दीन जुलाहा । इसलिये ये दोनों अपने अरमानों को दिलों में ही दफ़न कर देते हैं । दोनों एक-दूसरे को प्यार करते हैं इस ओर किसी का ध्यान भी नहीं जाता । "इस बात पर किसी ने इसलिये गौ़र नहीं किया कि यह गौ़र करने की बात ही नहीं थी । कहाँ अब्बू मियाँ की बेटी सईदा और कहाँ जवाद मियाँ का हरामी बेटा कम्मो !"48 इसके अतिरिक्त रक़ियाने वाले शिया लोगों से कहीं ज़्यादा दौलतमंद थे किन्तु फिर भी छोटी जाति होने के कारण उनके साथ भेदभाव किया जाता है । "ये लोग इतने दौलतमंद हैं कि जब चाहें, खड़े-खड़े पूरे गाँव को खरीद लें लेकिन ये कपड़े वाली कुर्सी पर नहीं बैठ सकते थे । इन लोगों के लिए लकड़ी या टीन की कुर्सी रखी जाती थीं ।"49

हम्माद मियाँ को इस बात की चिंता हो जाती है कि अब्बास जिस लड़की से इश्क़ करता है वह सुन्नी है । "वह तो इश्क़ कर रहा है । एक तो इश्क़-विश्क़ करना शरीफों का काम नहीं है । फिर वह लड़की सुन्नी है । क्या सुन्नी ब्याह लाऊँ ? मोहर्रम में चूड़ियाँ बजाती फिरेगा तो कैसा लगेगा ?"50

यहाँ विधवा की दयनीय स्थिति का भी वर्णन मिलता है । जहाँ रुढ़िगत परंपराओं ने इस समाज को जकड़ रखा है । उम्मुल हबीबा को कोई शुभ-प्रसंग में सम्मिलित होने का अधिकार नहीं था । उसके साथ अछूतों जैसा व्यवहरा किया जाता था । अतः ऐसे अवसर पर वह अछूत हो जाती थी । शादी के तीसरे दिन ही वह विधवा हो गई थी । "उम्मुल हबीबा शादी-ब्याह के मौकों पर अछूत हो जाया करती थी । दुल्हन के कपड़ों को छू नहीं सकती थी । कँदूरी के फ़र्श पर उसकी परछाईं नहीं पड़ सकती थी । दुल्हन के कपड़ों को वह छू नहीं सकती थी । यहाँ तक कि दूसरों की शादी के गीत सुनते-सुनते उसके बाल क़ब्ल-अज़-वक़्त सफ़ेद हो गए थे ।"51

आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत मुस्लिम समाज में हमें बेरोज़गारी की समस्या भी दिखाई देती है । यहाँ के अधिकतर नौजवान काम न होने के कारण अपने बीवी-बच्चों को छोड़कर शहर की ओर पलायन करते हैं । जिसके कारण इन लोगों के जीवन में सूनापन है । राही जी गाँव की स्थिति बताते हुए इस गाँव के सूनेपन पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं -

"लेकिन इन दीवारों पर अब कोई बैठता ही नहीं । क्योंकि जब इन पर बैठने की उम्र आती है तो गज़भर की छातियों वाले बेरोज़गारी के कोल्हू में जोत दिये जाते हैं कि अपने सपनों का तेल निकालें और उस ज़हर को पीकर चुपचाप मर जायँ ।"

"लगा झूलनी का धक्का
बलम कलकत्ता चले गये ।"52

कलकत्ता इस समाज के लिये एक विरह का नाम है । जहाँ इनके दिलों में न जाने कितना दर्द, कितनी अनकही कहानियाँ

भरी हुई हैं । इनकी आँखों में विरह का इतना दर्द है कि यह दर्द जाग उठता है और गाना गाता है :-

"बरसतः में कोऊ घर से ना निकसे
तुमहिं अनूक बिदेस जवैया ' ' '"53

राही जी ने मुस्लिम समाज के तौर-तरीके उनके खान-पान की शैली का भी अत्यंत वास्तविकता के साथ चित्रण किया है । यहाँ हमें लखनवी शैली में खाने-पीने की नज़ाकत दृष्टिगोचर होती है । यथाः-

"जब हुद्दन फुफ्फू खाना निकालने बैठतीं तो पहले फूफा की सेनी तैयार होती । चीनी के नफ़ीस बरतनों में कई तरह के सालन निकलते, छोटी-छोटी प्यालियों में कई तरह की चटनियाँ निकलतीं, अचार और मुरब्बा निकलता एक प्याले में ओटा हुआ गाढ़ा गुलाबी दूध होता, जिस पर कोई तीन अंगुल मोटी मलाई होती ।"54

मुस्लिम समाज में औरतें अपने शौहर का नाम नहीं लेतीं हैं । "अकबरी बीबी का तो यह हाल था कि चूँकि उनके मियाँ का नाम मुहम्मद था, इसलिए वह मरते मर गयीं, लेकिन आधी से ज़्यादा ज़िन्दगी गाज़ीपुर में गुज़ारने के बावजूद वह 'मुहम्मदपुर' को 'ऊहपुर' कहा करती थीं । और जब उनकी बड़ी पोती सरवरी की शादी इब्ने अली से हुई तो बड़ा फ़ज़ीता खड़ा हो गया । नौहों-मरसियों में इब्ने अली बार-बार आता है । इसलिए शादी के बाद पहला मोहर्रम आया और सरवरी ने हस्बे-दस्तूर नौहा पढ़ना शुरु किया, तो दूसरे ही शेर में इब्ने अली आ गया । अकबरी बीबी इस क़दर ख़फा हुईं कि फ़र्श-हुसैन से उठ गयीं । उन्हें लाख समझाया कि इब्ने अली इमाम हुसैन को कहते हैं, मगर वह नहीं मानीं । उनकी मतक़ अजीब थी, "मैं का न जनतियूँ ? बाक़ी इब्ने अली ऊ के मियाँ का नाम है कि ना !" इस बात से अकबरी बीबी इतनी नाराज़ हो जातीं थी कि सरवरी से महीनो बात नहीं किया करती थीं ।"55 यही हाल हाजरा का था । वह ख़याल में भी कभी अपने पति का नाम नहीं लेती थी । "अली बाक़र पाकिस्तान के खिलाफ़ था और वह पाकिस्तान में है और यह यानि वज़ीर हसन, बीवियाँ ख़यालों में भी मियाँ का नाम नहीं लेतीं, 'यह वह' किया करती हैं । पाकिस्तान बनवाने में जी-जान से लगे हुए थे, तो 'यह' यहीं हैं । ऐसा क्यों हैं ? 'उनसे'

पूछना संभव नहीं था, क्योंकि वह तो कोई बात करो तो काटने को दौड़ते हैं । दिल-ही-दिल में हाजरा अपने 'उन' से बहत झल्लाई हुई थी ।"56

तो वहीं दूसरी ओर मुस्लिम समाज में औरतों की नाक़दरी दिखाई देती है । जहाँ अपनी पत्नी पर हाथ उठाना, उसे मारना पुरुष अपना अधिकार समझते हैं । "रहमान-बो ने कुछ कहना चाहा तो वाजिद मियाँ ने उसे दो थप्पड़ मारे । मारने की बात ही थी । एक दाश्ता की यह मजाल कि उनकी मरज़ी के खिलाफ़ चीं-पीं करे । वाजिद मियाँ ने रहमान-बो को मारना शुरु कर दिया ।"57

मुस्लिम समाज में वहाबी मुसलमान ताज़ियादारी नहीं करते । गंगौली में कितने वहाबी मुसलमान ऐस हैं जो ताज़ियादारी नहीं मानते किन्तु उनके पूर्वजों के कारण वह इसमें शरीक होते हैं । आधा गाँव में अशरफुल्ला खाँ वहाबी हैं । और ताज़ियादारी को गुनाह मानते हैं । "भई, तुम तो जानते हो मैं सिरे से ताज़ियेदारी के खिलाफ़ हूँ । लेकिन बाप-दादा इसे करते आये हैं, इसलिये हर साल यह गुनाह करता हूँ कि उनकी रूहों को तकलीफ़ न हो, और लोग यह भी न कहें कि रोटी बाँटनी पड़ती थी, इसलिये ख़ान साहब पिचक गये । दस मजलिसें कर लेता हूँ कि दुनिया की ज़बान बंद रहे । रोज़ कोई दो हज़ार रोटियाँ बाँटनी पड़ती हैं दसवीं को अब्बा मरहूम के ज़माने तक दो देग उतरते थे । मैंने दो देग और बढ़ा दिये कि लो सालो, खाओ और समझ लो कि मुझे अपने बाप-दादा का नाम ईमान से ज़्यादा प्यारा है ।"58

इसके अतिरिक्त मन्नतें मानना भी वहाबी मुसलमान गुनाह मानते हैं । यथा :- "मगर अशरफुल्ला खाँ ये मन्नतें नही मान सकते थे, क्योंकि वह वहाबी मुसलमान थे और उनके ख़याल म मन्नत मानना गुनाह था ।"59

मुस्लिम समाज के तौर-तरीकों का राही जी ने बहुत ही बारीकी से चित्रण किया है । हुक्का पीना, पान खाना आदि ये मुसलमानों के शौक़ हैं । यथा :- "समीउद्दीन खाँ भी आ गये । उनका बेटा बदरुद्दीन उर्फ बदरुआ हुक़्क़ा भर लाया, जिसकी नै से कलाबत्तू उधड़ चुकी थी, और सिर्फ़ मैलख़ोरा लाल कपड़ा रह गया था । चिलम के सुलग जाने तक तो समीउद्दीन खाँ कश लेते रहे, फिर गट्टा दबाकर उन्होंने हुक्का गुलाम हुसैन खाँ

की तरफ़ मोड़ दिया । गुलाम हुसैन खाँ जौनपुरी ख़मीरे की महक से यूँ ही बेचैन हो रहे थे । समीउद्दीन खाँ वक़्त-बेवक्त़ के लिए थोड़ा-सा ख़मीरा रखते थे । वरना रोज़ाना के लिए तो वह अठसेरे से काम चला लिया करते थे ।"60

मुस्लिम समाज में पान खाने के शौक़ीन पान की गिलौरियाँ बनाकर एक विशेष पकार के पानदान में रख लिया करते हैं । और कहीं भी जाना हो तो अपने साथ लेकर चला करते हैं । राही जी ने इसका बहुत ही खूबसूरत वर्णन किया है । "टामी ने अब्बा को वकील किया था । चुनाँचे वह मुक़दमे की मिसिल लेकर अकसर आया करती थीं । उनके साथ चाँदी का एक खूबसूरत ख़ासदान हुआ करता था जिसमें सफ़ेद पान की नन्हीं-नन्हीं गिलौरियाँ हुआ करती थीं । खुद गिलौरी खाने से पहले वह ख़ासदान अब्बा की तरफ़ बढ़ातीं । अब्बा इन्कार कर देते, तब वह मुँह में गिलौरी रखने के बाद मुक़दमे की बात शुरु करतीं ।"61

मुस्लिम समाज में लड़कियों को पढ़ाना अपनी संस्कृति के विरुद्ध माना जाता है । जबकि इस्लाम में नारी शिक्षा पर अधिक ज़ोर देने की बात कही गई है । "इस्लाम के अंतिम पैग़म्बर मुहम्मद साहब ने महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया था उन्हीं के शब्दों में, तुमने अगर एक मर्द को पढ़ाया तो केवल एक को तालीम दी । लेकिन एक औरत को पढ़ाया, तो एक खानदान को शिक्षित किया ।"62 किन्तु यह समाज इस बात का अनुसरण न करके नारी को चार दीवारी में रखता है । उसे पर्दे में रखने की वस्तु समझता है । यदि इस समाज में कोई नारी शिक्षित होने का प्रयत्न करती है तो लोग उसे ग़लत समझते हैं ।

'आधा गाँव' उपन्यास की पात्र सईदा पढ़ने के लिए अलीगढ़ जाती है । तो लोग इस बात का विरोध करते हैं तथा उसके बारे उल्टी-सीधी बातें करते हैं । "इधर-उधर लोगों ने काफ़ी बातें बनायीं सईदा कई लोगों से फँसायी गयी । उसके दो-एक पेट गिराये गये ।"63 इसके अतिरिक्त इस समाज में महिलाओं के नौकरी करने पर भी आपत्ति उठाई जाती है । जब सईदा अलीगढ़ में ही नौकरी करने लगती है तो वह अपने माँ-बाप को पैसा भेजती । फैशन के अनुरूप कपड़ा भेजती । "महूँ कहों कि हियाँ गंगौली में ई कपड़ा कहाँ से आ गवा ! त बेटी की कमाई है ! कमाई ! बेटी की कमाई ! सईदा की माँ तड़प गयीं । हे मौला

! आप गवाह रहिएगा, जैयसा लोग हमारी बेटी पेर रहे ।" ए में पेरे की कौन बात है ?" रब्बन बी ने कहा, "कि लग्यि तों हाथ उठा-उठा के कोसे, कमा ना रही त का कुरान पढ़ रही ?"64

राही जी ने अपने उपन्यासों में मुस्लिम समाज के अन्तर्गत अंधविश्वास, टोना-टोटका आदि का भी चित्रण किया है । जहाँ मौलाना, फ़कीर आदि पर इस समाज की औरतों को अंधा विश्वास होता है । 'ओस की बूँद' उपन्यास में बेहाल शाह बाबा के सामने औरतों अपनी समस्याएं रखतीं हैं । "किसी को पोता चाहिए, किसी को नवासी । किसी के यहाँ ताबड़-तोड़ सात लड़कियाँ हो चकी हैं और मियाँ कहता है आठवीं हुई तो तलाक़ दे दूँगा । यह बीमार हैं । वह दुखी हैं । इसका मियाँ क़त्ल के मुक़दमे में फँसा हुआ है । 'तनी अललाह मियाँ से कहिए शाह साहब, कि ऊ ऊ झाड़ूमारे की मव्वत एही तरा लिक्खिन रहा त ए में फुक्का के अब्बा का कउन कसूर है ।'''65

उसी प्रकार से हमें आधा गाँव उपन्यास में भी मुस्लिम समाज में अंधविश्वास दृष्टिगोचर होता है । यथा :- "हम एक ठो कहानी सुनायें ?" फ़त्तो ने उसके सिरहाने बैठते हुए पूछा ।

"सुनाओ"

"एक ठो रहा बाश्शाह'''"

"देख रही नन्ना'''" कुद्दन बावर्चीखाने से ही चीख़ी, "दिन को कहानी सुना रही है माटीमिली । अरे, बड़के मामू रस्ता भूल जज्यहें ।"66

'टोपी शुक्ला' उपन्यास में इफ़्फ़न की दादी नमाज़-रोज़े की पाबन्द थी । वह हिन्दुओं का छुआ नहीं खाती थीं । "परन्तु जब इकलौते बेटे को चेचक निकली तो वह चारपाई के पास एक टाँट पर खड़ी हुईं और बोलीं : "माता मोरे बच्च को माफ करदयो ।"67

इस प्रकार राही जी ने मुस्लिम समाज का बड़ी ही बेबाकी एवं यथार्थ रूप में चित्रण किया है । अतः मुस्लिम समाज के व्यवहारिक जीवन एवं किया-कलापों का राही जी ने सूक्ष्मता के साथ चित्रण किया है । मुस्लिम समाज के अन्तर्गत होने वाली आन्तरिक उथल-पुथल को राही जी स्पष्ट रूप से चित्रित करने में सफल हुए हैं ।

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों के समाज में हिन्दू-मुस्लिम एक्यः-

हिन्दू-मुसलमानों में एकता के प्रति कोई कटु भावना नहीं रही थी । हिन्दू-मुसलमान के पारस्परिक सम्बन्ध गहरे थे । सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से दोनों की परम्पराएँ समान थीं । त्यौहार यहाँ एक साथ मनाये जाते थे । भारत देश के लोग मूलतः हिन्दू ही थे । जिन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार किया वे मसलमान कहलाये । इसके बावजूद इन दोनों धर्मों के रीति-रिवाज, तीज-त्यौहार, रहन-सहन आदि में कोई अन्तर नहीं आया था । यद्यपि इनके जीवन जीने की पद्धति भी समान थी । धर्म बदल लेने पर भी यह लोग अपनी परम्पराओं से जुड़े रहे । "ज़्यादातर मुसलमान ऐसे थे जिन्होंने अपना पुराना धर्म बदल लिया था, पर पुरानी परम्परा को अब भी नहीं भूले थे । वे हिन्दू विचारों, कथाओं और पुराणों की कहानियों से वाकिफ़ होते थे, वे एक तरह-सा काम करते, एक-सी ज़िन्दगी बिताते, एक-से कपड़े पहनते और एक ही बोली बोला करते । इनके लोकगीत एक थे । धार्मिक भेद होने के बावजूद भी हिन्दुस्तान इनका देश था । ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता कि विभाजन चर्चा से पूर्व मुसलमान ने हिन्दुस्तान को अपना देश नहीं समझा हो ।"68 किन्तु कुछ ऐसी राजनीतिक शक्तियाँ थीं जिन्होंने इन सम्बन्धों को क्षीण करने के भरपूर प्रयत्न किये और सफल भी हुए । जिन्होनें लोगों मे यह भ्रम पैदा किया कि मुसलमान हिन्दू पर राज्य किया करता था । जिसके फलस्वरूप धार्मिक भेद-भाव का बीज पनपने लगा । इन सब परिस्थितियों का लाभ उठाया अंग्रेजी शासन ने । जिसने हिन्दू-मुस्लिम एकता को नष्ट करने में अपनी पूरी शक्ति लगा दी । कुछ भारतीय राजनीतिक शक्तियों ने अंग्रेज़ों का साथ दिया । इन राजनीतिक शक्तियों एवं अंग्रेज़ों की कूटनीति के फलस्वरूप इस एकता एवं समानता का खंडन हो गया । राही मासूम रज़ा ने अपने उपन्यासों में हिन्दू-मुस्लिम एकता के अनेक प्रसंग प्रस्तुत किये हैं । जिससे उनकी धार्मिक सौहार्द की भावना के दर्शन होते हैं ।

डॉ० राही मासूम रज़ा सदैव अनेकता में एकता के ऋणी रहे हैं । इसीलिए राही जी ने अपने लगभग सभी उपन्यासों में हिन्दू-मुस्लिम एकता को दर्शाने का सफल प्रयत्न किया है । राही जी का आधा गाँव उपन्यास हिन्दू-मुस्लिम एकता को दर्शाता है । जहाँ हिन्दू-मुस्लिम

आपसी मानवीय सम्बन्ध साम्प्रदायिकता के वातावरण में भी मज़बूत दिखाई देते हैं । जहाँ मुस्लिम समाज में मनाया जाने वाला त्यौहार मोहर्रम केवल मुसलमानों का ही विश्वास नहीं अपितु हिन्दुओं का भी विश्वास है । जिसका एक बहुत बड़ा उदाहरण वह विधवा ब्राह्मणी है जिसकी उलती न गिरने पर वह परेशान हो जाती है । "एक साल ऐसा हुआ कि एक बेवा ब्राह्मणी की उलती मजदूरों की भूल से ज़रा कम निकली हुई थी । बड़ा ताज़िया उसे गिराये बिना चला गया वह बेवा फूट-फूट कर रोने लगी कि इमाम साहिब उससे रुठ गये हैं इसलिये जरुर कोई मुसीबत आने वाली है । नहीं तो भला ऐसे कैसे हो सकता था कि बड़ा ताजिया उसकी उलती गिराये बिना चला जाता । "हे इमाम साहिब ! हमार उइकन के कछऊ हो गइल ना, त ठीक न होई !" फिर उसने हम्माद मियाँ को घेरा, "चलो मीर साहिब ! हमार उलतियाँ गिरवाये लेई !"69

मोहर्रम हिन्दू-मुस्लिम एकता को प्रदर्शित करता है । राही जी इस बात को मानते हैं कि अकेला एक मोहर्रम ही ऐसा त्यौहार है जिसे हिंदुस्तानी मनाते हैं क्योंकि होली हिन्दुओं का और ईद मुसलमानों का त्यौहार है । राही जी ने हमेशा हिन्दू-मुस्लिम एकता की बात कही । उनके लगभग सभी उपन्यासों में यह चिंता एवं धार्मिक एकता के प्रति संवेदनशीलता सर्वत्र दृष्टिगोचर हुई है । 'खुदा हाफिज़ कहने का मोड़' में मोहर्रम को लेकर उन्होंने अपने निजी अनुभव भी व्यक्त किये हैं । राही जी ने हिन्दुओं की मोहर्रम के प्रति अटूट श्रद्धा का वर्णन किया है । राही जी लिखते हैं, "वाराणसी में कुछ दिनों पहले तक एक हिंदू हलवाई मुहर्रम की नवीं तारीख़ को हुसैन के नाम पर अपनी पूरी दुकान लुटा दिया करता था, और फिर मुहर्रम के बाद नये सिरे से अपना कारोबार शुरु किया करता था । कस्बाती शहरों और देहातों में आज भी हिंदू ताजियों पर चढ़ावे चढ़ाते हैं, ताजियों को सजदा करते हैं, घरो में मन्नत के कागजी ताजिये रखते हैं । वे आज भी बच्चों को 'इमाम साहब' का पैक बनाते और बीमार बच्चों को दुलदुल और ताजियों के नीचे से निकाले देखे जा सकते हैं ।"70

मुहर्रम के समय हिंदू-मुसलमान सभी ताजियों के आगे मन्नतें मानते हैं । यहाँ दोनों धर्मों की ताजियों के प्रति गहरी आस्था दृष्टिगोचर होती है । गंगौली के मुसलमानों में आपसी बैर आदि दिखाई देता है किन्तु हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध यहाँ बहुत गहरे

दिखाई देते हैं । दोनों धर्म बड़ी ही प्रेम-भावना एवं आत्मीयता के साथ जीते-मरते चले आ रहे हैं । गंगौली गाँव में हिन्दू लोग जहाँ मज़ारो आदि पर चादर चढ़ाते हैं । मन्नतें मानते हैं । तो वहीं दूसरी ओर मौलाना आदि नमाज़ पढ़ने के बाद मस्जिद से निकल कर हिन्दू-मुसलमान सभी बच्चों पर फूँकते हैं । फुन्नन मियाँ हिन्दू-मुस्लिम एकता के पक्षधर हैं । वह मातादीन पंडित को मंदिर बनान के लिए पाँच बीघा ज़मीन इनाम में देते हैं ।

मोहर्रम के समय गाँव के अहीर और चमार ताजिया उठाते हैं । गंगौली गाँव में हिन्दू-मुस्लिम एकता के विषय में डा० जिलेदार सिंह जी लिखते हैं - "गंगौली में हिन्दू-मुसलमान एकता कोई अजूबी चीज़ नहीं है । जब तक देश आज़ाद नहीं हुआ था तब तक यह सामान्य बात थी । गंगौली के अहीर और चमार मुहर्रम का ताजिया उठा रहे हैं । नारये-तकबीर का नारा बोलकर लाठी भाँज रहे हैं । ब्राह्मणों व अन्य जातियों की उलतियाँ गिराकर ताजिया के लिए जगह बनाई जा रही है ।"7।

लेखक हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों को बड़ी ही आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करने में सक्षम हुआ है । बारिखपुर से आये हुए स्वामी जी के भाषण के बारे में सुनकर जयपाल सिंह घबरा जाते हैं । बफ़ाती ने जब जयपाल सिंह को कहा कि किसी गाँव के हिन्दू आकर उसे धमका रहे हैं । "अउरी अब ऊ सब जात बाड़न हमनी का घर फूँके । कहत बाड़न की तूँ जा पाकिस्तान । हम कहलीं की ना जाइब हम । बस, बिगड़ गइलन लोग ।"72 ठाकुर साहब भड़क गए । उन्होंने लपक कर लाठी उठाई और मुसलमानों की ओर से खड़े हो गए । "भीड़ की समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि आख़िर ठाकुर साहब मुसलमानों को क्यों बचाना चाहते हैं । स्वामी जी ने तो कहा था कि बाग़ में जो पूरियाँ छनी हैं वह ठाकुर की तरफ़ से हैं । और क्या ठाकुर साहब को यह नहीं मालूम कि मुसलमानों ने हिंदू औरतों और बच्चों के साथ क्या सुलूक किया । इसीलिए उनमें से एक बोला, "ई सब मुसलमान बाड़न साहब ! "तोहनी के हमसे ढेर मालूम बाय ?" खैरियत एही में बाय की चल जा लोग ! "हमनी त ई लोगन का घर-दुआर फूँके आइल बाड़ी ।" "हाँ-हाँ काहे नाहीं ! आवा लोग ! तनी हमहूँ देखीं कि कउनी माई अइसन जब्बर लड़का जन दिहल बाय !" जयपाल सिंह अपने घर वालों की तरफ़ मुड़े, "देखत का बाडा लोग ! मार के भगाव बहिनचोदन के !"73 प्रस्तुत उदाहरण से

गंगौली गाँव में रहने वाले लोगों की मानसिकता एवं उनके बीच परस्पर सम्बन्धों का पता चलता है । इन दोनों धर्मों में एकता की भावना समान रूप से दिखाई देती है ।

उसी प्रकार जब अनवारुल हसन राकी का लड़का फारूक़ फुन्नन मियाँ से पाकिस्तान बनवाने के पक्ष में बात करता है । "अंग्रेज़ों के जाने के बाद यहाँ हिंदुओं का राज होगा ।" इस पर फुन्नन मियाँ जवाब देते हैं । "हाँ-हाँ, त हुए बा । तू त हिंदू कहि रहियो जैसे हिंदुवा सब भुकाऊँ हैं कि काट लीहयन । अरे, ठाकुर कूवरपाल सिंह हिंदुए रहे । झिगुरियो हिंदू है । ऐ भाई, ओ परुसरमुवा हिंदुए न है कि जब शहर में सुन्नी लोग हरमज़दगी कीहन कि हम हज़रत का ताबूत न उठे देंगे, काहे को ऊ में शीआ लोग तबर्रा पढरूत हएँ, त परसरमुवा ऊधम मचा दीहन कि ई ताबूत उट्ठी और ऊ ताबूत उट्ठा । तोरे जिन्ना हमारा ताबूत उठवाये न आये ।"74

गंगौली में हिन्दू-मुसलमान एकता की जड़ें बहुत गहरी हैं । यहाँ किसी भी प्रकार का धार्मिक भेद-भाव देखने को नहीं मिलता । अलीगढ़ से आये मुस्लिम लीगी लड़के गंगौली के मुसलमानों को हिंदुओं के खिलाफ़ भड़काते हैं । "ठीक है, लेकिन जब हिन्दू आपकी माँ-बहन को निकाल ले जायँ तो फ़र्याद न कीजियेगा ।" तभी सामने से एक चमार मिटटी के तेल की बोतल लिए चला आ रहा था । वह कम्मो की आवाज़ सुनकर रुक गया । कम्मो ने उस चमार से कहा । "ई लोग अलीगढ़ से हम्में ई बताये आये हैं कि जब हिंदुस्तान आज़ाद हो जइहे, त तूँ हमरे लोगन की माँ-बहिन को निकाल ले जइहो ।" अरे राम-राम "! चमार बिल्कुल घबरा गया । "आप लोग त लिक्खल-पढ़ल बुझाताड़ीं । तनी सोचीं कि हमनी के जीयत कोउ मियाँ लोगन की बहन-मतारी की तरफ़ देख सकेला ?"75

फुन्नन मियाँ की बेटी रज़िया की मौत हो जाती है । फून्नन मियाँ को हिंदुओं का साथ देने के कारण मुस्लिम समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है जिसके कारण रज़िया की मौत में कोई मुसलमान सम्मिलित नहीं होता । उस समय ठाकुर पृथ्वी पाल सिंह का परिवार मौजूद रहता है । वह रज़िया की लाश को गड्ढे में उतारते ह कि "हम उतारब अपनी बहन को ।"76 यहाँ लेखक ने हिन्दू-मुस्लिम एकता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है ।

टोपी शुक्ला उपन्यास के माध्यम से राही जी ने हिन्दू-मुसलमानों के अटूट सम्बन्धों की ओर इंगित किया है । टोपी और इफ्फ़न घनष्ठि मित्र हैं । किन्तु दोनों ही इस समाज से झल्लाये हुए हैं । क्योंकि इफ्फ़न के पिता हिंदुओं से नफ़रत करते हैं । और टोपी का परिवार मुसलमानों से नफ़रत करता है । इन दो नफ़रतों के बीच में है इफ्फ़न और टोपी की मित्रता । यह नफ़रत का सिलसिला कहाँ जाकर थमेगा ? "दोनों उदास हो गए । इफ्फ़न हिन्दुओं से डरता था और इसलिए उनसे नफरत करता था । टोपी को भारत की प्राचीन संस्कृति से प्यार हो गया था, इसलिए वह मुसलमानों से नफ़रत करता था । परंतु दोनों उदास हो गए । नफ़रत की दीवार पर चढ़कर पुरानी दोस्ती ने झाँकना शुरु किया और यह देखकर उदास हो गए कि घाटे में वे दोनों ही रहे । हिपोक्रेसी के जंगल में दो परछाइयों ने अपने-आपको अकेला पाया तो दोनों लिपट गईं ।"77

राही जी बहुत ही सीधे अर्थों में इफ्फ़न और टोपी की मित्रता के विषय में लिखते हैं जहाँ वे यह बताना व्यर्थ समझते हैं कि हिन्दू और मुसलमान भाई-भाई है । क्योंकि कुछ रिश्तों को परिभाषित करने की अनिवार्यता नहीं होती । "इफ्फ़न टोपी की कहानी का एक अटूट हिस्सा है । मैं हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई की बात नहीं कर रहा हूँ । मैं यह बेवकूफ़ी क्यों करूँ !क्या मैं रोज़ अपने बड़े या छोटे भाई से यह कहता हूँ कि हम दोनों भाई-भाई है ? यदि मैं नहीं कहता हूं कि तो क्या आप कहते हैं ? हिन्दू-मुसलमान अगर भाई-भाई हैं तो कहने की ज़रूरत नहीं । यदि नहीं हैं तो कहने से क्या फ़र्क पड़ेगा ।"78

रक्षा बंधन भाई-बहन के प्रेम का प्रतीक है । जहाँ एक बहन भाई को राखी बाँधकर अपनी रक्षा का उत्तरदायित्व बनाती है । राही जी ने इस पवित्र बंधन के माध्यम से हिंदू-मुसलमान के मधुर सम्बन्धों का भी सुन्दर वर्णन किया है । जहाँ सकीना महेश को राखी बाँधती है । महेश ने दंगों के समय सकीना की रक्षा की थी । जिस समय बलवे हो रहे थे उस समय महेश सकीना को अपने घर में पनाह देता है । किन्तु उसकी जान की रक्षा कर अपने प्राणों का बलिदान दे देता है । वह बलवाइयों के हाथों बेमौत मारा जाता है । "सकीना को पहुँचाकर महेश वापस आ रहा था कि रास्ते में मार डाला गया ।"79 उसी प्रकार महेश का भाई रमेश भी सकीना से राखी बंधवाता था । वह फौज में भर्ती था । सकीना के पिता दंगों

में मारे गये थे । इसलिए सकीना को हिंदुओं से नफ़रत हो गई थी । किंतु वह अपने भाई को कभी नहीं भूली । वह रमेश को याद करती है । तकिये के नीचे रखा हुआ ख़त निकाल कर पढ़ती है । "सुक्कन मेरी बहन ! मैं लड़ाई के मैदान में हूँ, पता नहीं क्या होने वाला है । हर तरफ़ न ख़त्म होने वाली बर्फ़ का अटूट सिलसिला है । मैं बहुत अकेला हूँ क्योंकि मेरे पास तेरी राखी नहीं है । तू इतना क्यों बदल गई है सुक्कन ?"80

एक तरफ़ सकीना की हिन्दुओं के प्रति नफ़रत है तो दूसरी ओर वह राखियों को एक बक्स में इकटठा करके रखती है । जो उसके प्रेम का प्रतीक है । "उसने अपने बक्स से चौदह राखियाँ निकालीं । हर राखी को प्यार करने के बाद उसने उन्हें फिर बक्स में रख दिया ।"8। इन राखियों को संभाल कर रखने का अर्थ शायद सकीना भी नहीं जानती थी । हिन्दुओं के प्रति उसकी नफ़रत खुलेआम थी किन्तु अपने अंदर की भावना को वह बयान नहीं कर सकती थी । "सब जानते थे कि वह हिन्दुओं से नफ़रत करती है । परन्तु कोई यह नहीं जानता था कि उसके बक्स में तले-ऊपर चौदह राखियाँ रखी हुई हैं । इन दोनों में सच्चा कौन था ? उसकी नफ़रत जिसे सब जानते थे, या वे राखियाँ जिन्हें कोई नहीं जानता था ? सच और झूठ में फ़र्क़ करना कोई आसान नहीं है । यह बात शायद सकीना को भी नहीं मालूम थी कि उसकी नफ़रत झूठी है या उसकी राखियाँ ।"82

'कटरा बी आर्ज़ू' उपन्यास में राही जी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के सुन्दर चित्र प्रस्तुत किये हैं । जहाँ हिन्द-मुसलमानों का एक मुहल्ला है । यहाँ किसी भी प्रकार की भिन्नता या हिन्दू-मुस्लिम भेद-भाव प्रकट नहीं होता । लेखक ने शम्सू मियाँ और देशराज के सम्बन्धों द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता को दर्शाया है । देशराज शम्सू मियाँ को अपने पिता समान समझता था । शम्सू मियाँ के खाना न लाने पर वह उनको अपने साथ खाना खिलाता है । क्योंकि वह शम्सू मियाँ की तंग हालत को जानता था । इसीलिए बाबू गौरी शंकर से यूनियन बनाई जाने की बात पर जब शम्सू मियाँ और देशराज की राय अलग होती है तो दोनों के बीच एक दूरी आ जाती है । परन्तु दोनों एक-दूसरे के लिए तड़पते हैं । देशराज को वह अपने बेटे अब्दुल हक़ के समान मानते थे जो पाकिस्तान चला गया था । "आज रात वह अपने बेटे अब्दुल हक़ से जैसे दोबारा बिछड़ गए थे । और सारा घर उनक इस दर्द से

बेख़बर सो रहा था ।"83 इस घटना के काफी समय बाद दोनों नज़दीक से जब मिले तो शम्सू मियाँ से रहा न गया और उन्होंने देशराज को गले लगा लिया "उन दोनों ने एक-दूसरे को सामने पाकर पूरी तरह यह महसूस किया कि वह एक-दूसरे के बग़ैर अधूरे थे । दोनों को अब्दुल हक़ याद आ गया । देश आँसू पी गया पर शम्सू मियाँ उसे लिपटाकर बच्चों की तरह रोने लगे ।"84

बिल्लो और देश महनाज़ की शादी के लिए दहेज की व्यवस्था करते हैं । दोनों एक-दूसरे को झूठ बोलकर रेडियो एवं साइकिल खरीदकर शम्सू मियाँ का बोझ हल्का करते हैं । इसके अतिरिक्त देशराज शहनाज़ को अपनी छोटी बहन जैसा मानता था । शम्सू मियाँ से मनमुटाव होने पर भी वह घर आया करता । "पर जब शम्सू मियाँ न होते तो वह उसी तरह दिन में एक बार उनके घर आता । सकीना से बातें करता । शहनाज़ से छेड़छाड़ करता । उसके कोसने सुनता और यह पता ही नहीं चलने देता कि शम्स मियाँ से उसे कोई शिकायत है ।"85 जब महनाज़ की शादी उससे दुगुनी उम्र वाले जोखन से तय की जाती है जिसे महनाज़ के बच्चे नाना कहा करते थे तो बिल्लो भड़क जाती है । और क्रोधित होकर बोलती है । "शम्सू मामू इन्कार ना किहिन हैं । महनाज़ बाजी उनकी बेटी हैं । कोई जने को बीच में बोले की जरूरत ना है । ऊ चाहें तो महनाज को अन्धे कुएँ में फेंक दें ।"86

होली के वर्णन द्वारा भी राही जी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के सुन्दर चित्र प्रस्तुत किये हैं । जुमे के दिन होली थी जिसके कारण मौलवी खैराती और शम्सू मियाँ छिपकर अपने घर से बाहर निकल रहे थे । देश और कटरा मीर बुलाकी के लोग उनकी ही राह देख रहे थे । तभी पहलवान ने देख लिया "बहुत चंट बनते रहे ।" "जुम्मे के मारे लुका गए रहे ।" शम्सू मियाँ ने कहा, "नहीं तो कभई ऐयसा भया है कि हम होली न खेलें । अभई रंग खेलेंगे तो फिर नहाए को पड़ेगा । जुम्मे का बखत निकल जाएगा ।"87 तभी कोई बाहर का आदमी बोला । "अरे मियाँ लोग को तो कोई बहाना चाहिए होली न खेले का ।" पहलवान ने उस आदमी को थप्पड़ मारा जो हिन्दू-मुस्लिम एकता में दरार डालने का प्रयत्न कर रहा था । उनमें भेद-भाव पैदा करने का प्रयत्न कर रहा था । पहलवान ने उसे एक लप्पड़ दिया कि वह लुढ़कनियाँ खाकर दूर जा गिरा । "ई कटरा मीर बुलाकी है ।" पहलवान ने कहा, खबरदार जो

इहाँ हिन्दू मुसलमान का चक्कर चलाया । मौलवी साहब जुमे की नमाज़ कज़ा करने की बात करते हैं । "कजा कैयसे कर लोगे जुम्मे की निमाज । कोई मजाक है ।" पहलवान ने कहा, "और ई साला होता कौन है हमरे महल्ले की निमाज कजा करवाए बाला ? निकल हमरे महल्ले से ।"88 यहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों में एकता की भावना दृष्टिगोचर होती है ।

पाकिस्तान निर्माण से पूर्व वज़ीर हसन और दीनदयाल घनिष्ठ मित्र हुआ करते थे किन्तु पाकिस्तान निर्माण ने इन दोनों के बीच कुछ दूरी बना दी थी । कभी यह दोनों एक-दूसरे के राजदार हुआ करते थे । पाकिस्तान निर्माण में पहले वज़ीर हसन साथ देते हैं किन्तु बाद में उनको यह एक राजनीतिक षडयंत्र लगता है । वज़ीर हसन पाकिस्तान बनवाकर झल्लाते हैं । उसे अपनी एक गलती मानते हैं । और इसलिए वह पाकिस्तान जाने से मना कर देते हैं । अली बाकर जब वज़ीर हसन को पाकिस्तान चलने के लिए बोलता है । तो वज़ीर हसन अपने दोस्त दीनदयाल और अपने देश को छोड़कर पाकिस्तान जाने से इन्कार कर देते हैं । वे अपनी दोस्ती के बारे में अली बाकर को बताते हैं । "मियाँ तुम नहीं समझोगे ये बातें । वह दीनदयाल जो अब बाबू दीनदयाल हो गया है ना, और जो मुसलमानों को कर वक़्त गालियाँ दिया करता है ना, मेरा लंगोटिया यार है । हन दोनों साथ अमरूद चुराने जाया करते थे । हम दोनों ने एक साथ कँजड़ों की गालियाँ खाईं हैं जो मैं चला जाऊँगा तो उसके बिना मैं वहाँ अधूरा रहूँगा और मेरे बिना वह यहाँ । ऐसी बहुत-सी बातें हैं मेरे पास, जो मैं सिर्फ़ दीनदयाल से कह सकता हूँ ;और उसके पास भी ऐसी हज़ारों बतें हैं, जो वह सिर्फ़ मुझी से कह सकता है । तो उन बातों का क्या होगा ? मुस्लिम लीग हो या महासभा, दीनदयाल और वज़ीर हसन से बड़ी नहीं हैं ।"89

पाकिस्तान बनने की हलचल ने हिन्दू-मुसलमान दोनों को प्रभावित किया था । दीनदयाल भी इस बात से परेशान थे कि मुसलमानों के लिए पाकिस्तान बनाने की क्या ज़रूरत है ? "दीनदयाल यह सोच रहा था कि हिंदुस्तानी मुसलमानों को जीने का अधिकार दिलाने के लिए पाकिस्तान बनवाने की क्या ज़रूरत है ।"90 ओस की बूँद तो उधर वज़ीर हसन मन में सोचा करते थे कि दीनदयाल ने पाकिस्तान बनने से रोका क्यों नहीं ? पाकिस्तान बनने के बाद वे अपने जीवन में अकेलापन अनुभव कर रहे थे । वज़ीर हसन को

नहीं पता था कि यह बँटवारा दो देश का बँटवारा न होकर दो दिलों का, परिवारों का और दोस्ती का बँटवारा होगा । "मैं तो पाकिस्तान ठीक समझता था दीनदयाल ! इसलिए मैंने उसके लिए कोशिश की । लेकिन तुम तो पाकिस्तान को ग़लत समझते थे ना ? फिर तुमने क्यों बनने दिया पाकिस्तान ? बताओ !"9।

पाकिस्तान निर्माण एक दुःखद घटना साबित हुई । जिसने हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध की जड़ें काट दीं । हिन्दू-मुसलमान जो सदियों से एक साथ रहते चले आ रहे थे । स्वार्थी नेताओं ने हिन्दू-मुसलमान दोनों को भड़काया । तत्पश्चात अलगाव की भावना उत्पन्न हुई और हिन्दू-मुस्लिम एकता को खण्डित करने में यह राजनीतिक शक्तियाँ सफल हुईं । हिन्दू-मुस्लिम भेदभाव के विषय में डॉ० तसनीम पटेल जी लिखती हैं - मुसलमान और हिन्दू, सिख और इसाई, काले और गोरे, हिन्दी और तमिल, पंजाबी और सिंधी ये सब भेद ह । इन भेदों को रहना चाहिए, लेकिन इनके रहने की सार्थकता तब है, जब ये समूची मनावता को रंग बिरंगी बताने में सहायक हो । धर्म एक बात कहता रहा है, राजनीतिक और आर्थिक दूसरी बात कहते रहे । और इसलिए उसकी कमज़ोरी भर बनते चले गये । आज हमारे सामने यह सवाल एक नये रूप में आकर खड़ा हो गया, यह स्पष्ट हो गया है कि धर्म, राष्ट्र से भिन्न चीज है । बंगाल देश के मामले में भी सारी दुनिया काजी नज़रुल इस्लाम के इन शब्दों को दोहराएगी ही कि-

"मोरा एक वृने दृष्टि कुसुम, हिंदू मुसलमान ।
मुस्लिम तार नयन मन, हिंदू ताहार प्राण ।।"92

राही जी ने सदैव हिन्दू-मुस्लिम एकता की बात कही है । वे 'सर्वधर्म समभाव' की भावना मे विश्वास रखते थे । उन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों की ही जीवन पद्धति तथा सभ्यता एवं संस्कृति को सही रूप में चित्रित करने का प्रयत्न किया है । राही जी के लगभग सभी उपन्यासों में हिन्दू-मुस्लिम एकता के दर्शन होते हैं । इस विषय में डॉ० शैलजा जायसवाल जी लिखती हैं - "राही मासूम रज़ा ने हिंदू और मुसलमान दोनों जातियों के जीवन के आचार-विचार, रहन-सहन, धार्मिक मान्यताओं को चित्रित करने का प्रयास किया है । प्रमुख रूप से शिया मुसलमान का उल्लेख हुआ है, किंतु कहीं भी भारतीय समाज एवं संस्कृति को

चोट नहीं पहुँचायी है । एक सामान्य भारतीय समाज के जनजीवन की भीतरी और बाहरी विभिन्नता में एकता के स्वर को मुखरित किया है । ज़मींनदारी प्रथा के समाप्त होने से दोनों जातियों के जीवन मूल्यों में परिवर्तन आया । लेखक दोनों जातियों में सम्मान एवं स्वाभिमान की भावना जागृत करते हैं । दोनों जातियों को एकसूत्र में बाँधने का प्रयास किया है ।"93

निष्कर्ष :-

अतः यह स्पष्ट होता है कि राही जी अपने उपन्यासों में भावात्मक एकता तथा मानवता के सुन्दर चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं । उच्च वर्गीय समाज की खोखली शान को राही जी ने यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है । जो केवल एक दिखावा है । उच्च जाति का दंभ रखने वाला यह समाज अंदर से कितना खोखला है लेखक ने यह बड़ी ही ईमानदारी से प्रस्तुत किया है । राही जी ने मध्यम वर्गीय समाज में विद्यमान मानवीयता के गुणों आदि को बखूबी प्रस्तुत किया है । इस समाज के संघर्षों एवं बलिदानों का राही जी ने विस्तृत रूप से चित्रण किया है । लेखक ने अपने उपन्यासों में अनेक समाजों का विवरण दिया है किन्तु मुख्य रूप से मुस्लिम समाज का चित्रण मिलता है । जहाँ मुस्लिम समाज के प्रत्येक पहलू को राही जी ने बड़ी ही सूक्ष्मता एवं ईमानदारी के साथ चित्रित किया है । अंततः कहा जा सकता है कि राही जी ने प्रत्येक समाज के जीवन जीने की पद्धति, उनकी मान्यताओं, परंपराओं एवं सांस्कृतिक पहलुओं का बड़ी ही सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया है ।

संदर्भिका

1. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 235
2. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 41
3. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 292
4. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 293
5. राही मासूम रज़ा : एक अध्ययन, डॉ० जिलेदार सिंह पृ० 119

6. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 81
7. नीम का पेड़, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 61
8. कटरा बी आर्ज़ू, डा० राही मासूम रज़ा पृ० 17
9. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 19
10. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 33
11. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 42
12. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 21
13. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 43
14. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 66
15. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
16. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 67
17. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 82
18. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 14
19. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 27
20. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 31
21. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 105
22. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 103
23. सीन : 75 डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 57
24. दिल एक सादा कागज़, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 70
25. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 30
26. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 62
27. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 14
28. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 100
29. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 138
30. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 86
31. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 88
32. अआधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 74
33. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 81
34. राही मासूम रज़ा : एक अध्ययन, डॉ० जिलेदार सिंह पृ० 43
35. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 17

36. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 47
37. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 18
38. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 61
39. आधा गाँव, डॉ० राही मासम रज़ा पृ० 264
40. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 120
41. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 69
42. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 17
43. राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में व्यक्त जीवन दर्शन, डॉ० सुनन्दा मग्गीवार पृ० 173
44. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 181
45. समय के साक्षी प्रमुख मुस्लिम उपन्यासकार, डॉ० तसनीम पटेल पृ० 31
46. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 16
47. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 62
48. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 235
49. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 51
50. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 185
51. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 118
52. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 09
53. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 10
54. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 22
55. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 158
56. ओस की बूँद, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 26
57. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 165
58. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 98
59. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 103
60. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 92
61. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 21
62. आठवें दशक के उपन्यासों में समाजशास्त्रीय अध्ययन, डॉ० शोभा कुलकर्णी पृ० 170
63. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 296
64. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 297
65. ओस की बूँद, डॉ० राही मासूम रज़ा, पृ० 59

66. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 245
67. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 25
68. भारत विभाजन और हिन्दी उपन्यास, डॉ० रसीला उमरेटिया पृ० 03
69. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 71
70. खुदा हाफ़िज़ कहने का मोड़, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 146
71. राही मासूम रज़ा : एक अध्ययन, डॉ० जिलेदार सिंह पृ० 107
72. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 274
73. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 275
74. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 155
75. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 240
76. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 167
77. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 49
78. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 24
79. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 53
80. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 87
81. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
82. टोपी शुक्ला, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
83. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 79
84. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 163
85. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 83
86. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 69
87. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 77
88. कटरा बी आर्ज़ू, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 78
89. ओस की बूँद, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 18
90. ओस की बूँद, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 24
91. ओस की बूँद, डॉ० राही मासूम रजा पृ० 27
92. समय के साक्षी प्रमुख मुस्लिम उपन्यासकार, डॉ० तसनीम पटेल पृ० 15
93. राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन संदर्भ, डॉ० शैलजा जायसवाल 83

******